कक्षा - 10

विषय : हिन्दी (प्रथम भाषा)

माध्यम : हिन्दी

રાજ્ય સરકારના શિક્ષણ વિભાગ દ્વારા અભ્યાસક્રમમાં મંજૂર
કરવામાં આવેલ અને પાઠ્યપુસ્તકમાં સમાવેશ કરેલ

प्रकरण - 1 समर्पण
प्रकरण - 2 देश भक्ति की संजीवनी

तमसो मा ज्योतिर्गमय

गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल
'विद्यायन', सेक्टर 10-ए, गांधीनगर - 382010

1 सर्मपण

श्रीमद् भगवत गीता कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञान योग का त्रिवेणी संगम हैं । विशेषता यह है कि त्रिवेणी में गंगा – यमुना – सरस्वती की तीनों धराऐं स्पष्ट रुप से अलग – अलग बहती हैं, लेकिन यहाँ वे परस्पर अद्वैत भाव से अन्योन्याश्रित हैं, और इतनी अनोखी हैं किं तीनों एक साथ अभिन्न रुप से बहती हैं । हालाँकि, अध्याय ७ से १२ में विशेष रुप से भक्तियोग को विस्तृतरुप से समझाया गया हैं । श्रीमद् भगवत गीता में वर्णित भक्ति विशेष हैं क्योंकि यहाँ हमारा कर्म ही भक्ति के रुप में प्रकट होता है । इस ग्रंथ में वर्णित भक्ति योग किसी भी स्थान, किसी भी समय, मानव मात्र के लिए उपकारक और मार्गदर्शक बन जाता हैं ।

गीता में वर्णित भक्तियोग को समझने से पूर्व भक्त और भक्ति की परिभाषा को समझना आवश्यक हैं ।

संपूर्ण ब्रह्मांड की स्थूल – चेतना में व्याप्त सर्वोच्च सत्ता की सर्वव्यापकता के संबंध में जो व्यक्ति अपना व्यक्तिगत आसक्ति को छोड़कर ईश्वर के लिए काम करता हैं, वह भक्त है । गरुण पुराण में भक्ति के संदर्भ में कहा गया है कि,

भज इत्येज वै धातु: सेवायां परिकीर्तित: ।

(अर्थात् भक्ति शब्द भक्त शब्द ज क्रियापद से बना है जिसका अर्थ सेवा हैं ।) भक्ति शब्द का अर्थ हम पूजा – पाठ तक मर्यादित करते हैं परन्तु 'सेवा' यह अर्थ उससें कहीं अधिक व्यापक और मुक्त है । इस अर्थ में समर्पण भाव से की गई जनहित की कोई भी प्रवृत्ति इसके दायरे में आती है । समझ के साथ किये गये सभी कार्य भक्ति की श्रेणी में आ सकते हैं, यदि वे निष्ठापूर्वक, समर्पण की भावना से किए जायें । भगवत् गीता इसे इस प्रकार परिभाषित करती हैं ।

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्परा: ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ (गीता 12.6)

(अर्थात् जो भक्त मेरे प्रति समर्पित हैं, वे अपने सभी कर्मो को मुझे अर्पण करके, मुझ (सगुण स्वरुपा) परमेश्वर को ही अनन्य भक्ति योग से निरंतर चिंतन एवं पूजन करते रहते हैं ।)

इस श्लोक का तात्पर्य यह है कि हमें अपने सभी कार्य इस भावना से करने चाहिए कि ईश्वर इसका साक्षी है और अपने कार्य को परमपिता परमेश्वर को समर्पित करना है । इस दृढ निश्चय के साथ कार्य करें तो वह कार्य स्वाभाविक रुप से पवित्र भाव से ही होगा । उदाहरण के रुप में, रसोई में बना भोजन सीधे हमारी थाली में आता हैं तो उसे भोजन कहा जाता है । परन्तु वही भोजन भगवान को अर्पित करने से प्रसाद बन जाता है । यदि प्रतिदिन इस भक्ति के साथ भोजन बनायें कि इसे भगवान को अर्पित करना है, भगवान के लिए ही है, तो वह भोज न स्वाभाविक रुप से पवित्रता और सद्भावना से भरा हुआ होगा । इस कर्म में शारीरिक परिश्रम के साथ – साथ मानसिक सर्मपण का मिलन ही भक्ति है ।

जब कुछ समर्पित करने की बात आती है तो श्रीमद् भगवत गीता का यह श्लोक स्मरण में आता है ।

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मन: ॥ (गीता 9.26)

(अर्थात् जब कोई भक्त प्रेमपूर्वक पत्र, पुष्प, फल, जल आदि अर्पित करता है तो वह शुद्धबुद्धि वाले नितकाम प्रेमी भक्त के द्वारा प्रेमपूर्वक दिये गये उन पत्र – पुष्प आदि को मैं सगुणरुप में प्रगट होकर अति प्रेम से खाता हूँ ।)

जब हम इस श्लोक को पढ़ते हैं, तो हमें एक बात समझनी चाहिए कि ब्रह्मांड में परमात्मा सबसे महान है परन्तु प्रेम भाव से अर्पित की गई छोटी सी चीज का संज्ञान लेते है, और प्रसन्न होते हैं । ऐसे में हमारे मित्रों के जन्मदिन, विवाह या अन्य किसी मौके पर कुछ सस्ते उपहार देने में बच्चे लघुता अनुभव करते हैं । माँ – बाप से कीमती उपहार लेने की जिद करते हैं और कहते हैं कि यदि मैं सस्ता उपहार दूँगा तो लोग उसे तुच्छ मानेंगे । अत– देनेवाला और लेनेवाला इस बात से परिचित होगा कि जब कोई भी सामान मन के पवित्र भाव के साथ जुड़ता है तब उत्तम सर्वश्रेष्ठ बन जाता है । अतुलनीय बन जाता है । तब वे दोनों एक दूसरों को देने और लेने में गर्व का अनुभव करेंगे ।

हमारे दैनिक व्यवहार में, कार्यो के आदान – प्रदान में तथा हमारे कर्तव्यों में सद्भावना होनी चाहिए । यह सद्भावना तुरन्त स्थाई नहीं होती परंतु इसका अभ्यास करना पड़ता है । भगवान श्री कृष्ण अभ्यास की आवश्यकत बताते हुए कहते हैं....

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।

अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय॥ (गीता 12.9)

(अर्थात् यदि तुम मन को मुझमें स्थिर रुप से स्थिर करने में समर्थ न हो, तो है धनंजय । अभ्यासरुपी योग के माध्यम से मुझे प्राप्त करने की इच्छा करो) हमने मन को परमात्मा से जोड़कर कार्य करने की बात की, परन्तु मन अति वेगवान अश्व के समान है जिसे संयम में लाना कठिन तो है परन्तु असंभव नहीं है । अर्जुन स्वयं कहते हैं कि **''चंञ्चलं हि मनः कृष्णा''** मन बहुत चंचल है । जिस विद्यार्थी को एकाग्र मन से पक्षी की आँख के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता, यदि वह (विद्यार्थी) कहे कि मन चंचल है, तो इसका उपाय अवश्य समझना चाहिए ।

इसका समाधान अभ्यास से ही होता है । अभ्यास अर्थात् **(चित्तस्य सर्वतः समाहत्य पुनः पुनः स्थापनम् अभ्यास)** मन को बार – बार एक ही स्थान से जोड़कर, निरंतर प्रयास और परिश्रम से एक ही कार्य करते रहना चाहिए । अत: एक ही विषय पर अनवरत अभ्यास करते रहने से एकाग्रता बढ़ती है । आज का पढ़ा हुआ पाठ यदि एकबार में समझ में नही आता, किन्तु उसे बार बार पढ़ना, समझा और समझाया जाये, और समग्रता के साथ उसका अभ्यास किया जाये, तो वह द्रढ़ हो जाता है और परीक्षा में अपेक्षित परिणाम प्राप्त होता है । यह है अभ्यास का महत्व । किसी भी कार्य की सिद्धि के लिए अभ्यास अति आवश्यक है ।

इस बात की पुष्टि एक अन्य उदाहरण के माध्यम से कर जाए । जब कोई वैज्ञानिक शोध कार्य का आरंभ करता है तो वह उसे एक कार्य के रुप में स्वीकार करता है, लेकिन उसकी निरंतर प्रवृत्ति और चिंतन उसे उस कार्य से एक नई पहचान दिलाती है । वह पहचान ही अभ्यास का परिणाम हैं । जब छात्र पढ़ाई करके उपरान्त नौकरी या व्यवसाय से जुड़ते हैं और उसे स्वीकार करते है तो प्रारंभ में वे ऐसा मानते है कि यह केवल अर्थोपार्जनकरने हेतु, अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए है । परन्तु धीरे – धीरे मन से उस कार्य को करते – करते, उसका वह कार्य मात्र सामान्य कार्य न होकर वह उनकी पहचान बन जाती है । वही कार्य उसके जीवन का पर्याय बन जाता है । यह बार – बार प्रयास करने से ही होता है । पचासों स्थान पर छोटे – छोटे गड्डे खोदने पर भी पानी नहीं निकलता, लेकिन एक ही स्थान पर लगातार खुदाई करने से कुआँ बन जाता हैं, और कुएँ से पानी निकलता है । जैसे हिमालय से निकलने वाली एक छोटी सी जल की धारा, एक ही मार्ग पर लगातार बहती रहे तो वह तुफान मारती तेज रफतार गंगा नदी बन जाती है ।

यदि अभ्यास कठिन लगे तो एक अन्य मार्ग भी गीता में बतायो गया है।

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः।

सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान्॥ (गीता 12.11)

(अर्थात् तुम मेरे प्राप्तिरुपी योग का सहारा लेकर उपर्युक्त उपाय करने में असमर्थ हो तो मन – बुद्धि पर विजय प्राप्त करके सभी कर्मो के फल का त्याग कर देना चाहिए ।)

इस श्लोक में (१) मद्योजमाश्रित (मुझ से जुड़ा हुआ) (२) चः स्वतंत्र स्वतंत्र (मन वाला) ये दोनों पद एक दूसरे के पूरक होते हुए भी विरोधाभासी, लगते हैं परन्तु यदि हम इन्हें समझ ले तो, हमें अपने जीवन के हर कार्य में आत्मबल मिलता है । अभी हम देखते हैं कि कार्य स्वीकार करने के बाद प्रायः हममें आत्मविश्वास की कमी आ जाती है । कार्य वड़ा है, तो चुनौती भी बड़ी है । और हम उसके सामने स्वयं को कमजोर और शक्तिहीन महसूस करने लगते हैं । परन्तु हाथी के कद के समान अंकुश का कद नहीं होता, अंधकार के समान दीपक नहीं होता । ताले के समान चावी नहीं होती, फिर भी सफळता मिलती है । हमे यह स्मरण रखना चाहिए कि ईश्वर हमारे साथ है, हम अकेले नहीं है । ऐसा मानना अनुचित है कि भगवान हैं तो वे सारे कार्य कर देंगे । हम स्वाधीन चित्तवाले स्वतंत्र है ऐसा मान कर हम पुरुषार्थ करेंगे तो भगवान हमारी सहायता करेंगे । हमें अपना कार्य स्वयं करना है और उसे पूरी समग्रता से करना है । यदि हम ऐसा करेंगे तो ईश्वर अवश्य हमारी सहायता करेंगे ।

परिणाम स्वरुप यदि हम प्रत्येक कार्य ईसी प्रकार से करेंगे तो कार्य पूर्ण होने के बाद हमें काम करने की थकान नहीं लगेगी । अपितु समर्पण भाव से किये गये कार्य से संतुष्टि मिलती है । हमें आन्तरिक प्रसन्नता का अनुभव होता है ।

इस प्रकार कार्य करने वाले व्यक्ति को परमात्मा का सानिध्य अधिक प्राप्त होता है । जिसे हम भक्त के विशेषण से जान सकते हैं ।

संसुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्‌भक्तः स मे प्रियः ॥ (गीता 12.14)

(अर्थात् जो योगी सदैव संतुष्ट रहता है, मन इन्द्रियों सहित शरीर को वश में कर चुका है और मुझमें द्रढ निश्चयवाला है – वह मुझमें अर्पित मन–बुद्धिवाला मेरा भक्त मुझे प्रिय हैं ।)

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित् ।

अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥ (गीता 12.19)

(अर्थात् जो निंदा और स्तुति दोनों में समान है, मननशील और किसी भी प्रकार से शरीर के निर्वाह होने से सदा सन्तुष्ट रहता है तथा निवास स्थान के प्रति ममता और आसक्ति से रहित है । स्थिर बुद्धिवाला भक्तिमान व्यक्ति मुझे प्रिय है ।)

इस श्लोक में संतुष्ट शब्द से तात्पर्य है कि हमें अपने क्षेत्र में खूब काम करना चाहिए परन्तु किसी लालसा से युक्त होकर काम नहीं करना चाहिए । जो प्राप्त हैं वह पर्याप्त है । जो सहजता से प्राप्त हो उसी में संतुष्ट रहने से आप तनाव, अवसाद जैसी कमजोर मानसिकता से बच सकते हैं । यदि संतोष न हो तो इन्द्र का सिंहासन भी तुच्छ है। अधिक असंतोष के कारण हम उस चीज का भी आनन्द नहीं ले पाते हैं जो हमारे पास है ।

श्लोक में एक पद है दढनिश्चयः (अर्थात्, द्रढ निश्चय वाला) रात को सोने से पहले हम यह सोचें कि हम प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्त में उठकर व्यायाम – योग – अध्ययन और पूजा – पाठ करेंगे । ऐसा द्रढ संकल्प करें, परन्तु प्रातःकाल की बेला में मोबाईल में अलार्म बजे तो उसे बंद करके फिर से सो जाये ऐसा नहीं होना चाहिए । यदि हमारा निश्चय द्रढ है, तो वह हमें दुबारा सोने नहीं देगा । हमें स्वयं को ऐसी स्वतंत्रता नहीं देनी चाहिए, और द्रढ निश्चय वाले बने रहेंगे तो हम वांछित परिणाम प्राप्त कर सकेंगे । छात्र जीवन में द्रढनिश्चय का बहुत महत्त्व है । तदुपरान्त तुल्यनिन्दास्तुतिः यह पद भी छात्रों द्वारा समझने और व्यवहार में लाने योग्य है । भगवत गीता में यह बात अनेक बार कही गयी है कि आलोचना और प्रसंशा दोनों को समानरुप से स्वीकार करना चाहिए । यूँ तो आलोचना शब्द पहले आता है क्योंकि जीवन में यह बात आलोचना का सामना करने के लिए अधिक तैयार रहना पड़ता हैं । जो आलोचना से ड़रता है वह सफल नहीं हो सकता । सोशियल मीडिया पर यदि कोई नकारात्मक कमेंट कर दे, लाइक कम मिले, थोड़ी बहुत डाँट पड़ जाये, या कोई दो वाक्य बोल दे तो कभी कभी हमें बहुत

बुरा लगता हैं । जिसे सहना आसान नहीं होता है । इस संदर्भ में भगवत् गीता में कहा गया हैं कि आलोचना सुनकर निराश नहीं होना चाहिये। हम संघर्ष करे तो अभ्युदय की प्राप्ति हो सकती है ।

इस प्रकार भगवद् गीता में बहुत ही अच्छे ढंग से वर्णन किया गया है कि यदि हम प्रत्येक कार्य भगवान के प्रति समर्पण भाव के साथ करें तो समर्पण भाव से किया गया उत्तम कार्य भक्ति योग में परिवर्तित हो जाता है ।

जीवन में अपने कर्तव्य क्षेत्र में जो कुछ आये वह सर्व व्यापी परमात्मा के प्रति समर्पण भाव से किया गया कार्य, जनहित का कार्य बन जाता है । यही सर्वोत्तम भक्ति हैं ।

शब्दार्थ

अद्वैत - अभिन्न, समर्पण - पूरी निष्ठा से अर्पित किया गया, अभ्यास - बारबार प्रवृत्ति करना लघुता - हीन भाव

स्वाध्याय

प्रश्न-1 : निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए ।

1. भगवत गीता किसका त्रिवेणी संगम क्या हैं ?
2. भज् धातु का मूल अर्थ क्या हैं ?
3. अभ्यास शब्द का अर्थ क्या हैं ?

प्रश्न-2 : पाठ के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए ।

1. पत्र, पुष्प, फल, जल अर्पित करने का प्रसंग क्या सीख देता है ?
2. अभ्यास के महत्त्व को सोदाहरण समझाइए ।
3. आज के संदर्भ में भक्ति योग का महत्त्व स्पष्ट करें ।

छात्र - प्रवृत्ति

- श्रीमद् भगवद् गीता के अध्याय - 12 के श्लोकों को लयबद्ध छंदबद्ध स्वर में गान करें ।
- समर्पण भाव को व्यक्त करने वाले श्लोक गीता में से खोजें और सुन्दर अक्षरों में लिखें ।

शिक्षक प्रवृत्ति

- अध्याय - 12 का गान यति नियमों को ध्यान में रखतें हुए अनुष्टुप छन्द के नियम के अनुसार सिखाये ?
- भक्ति से संबंधित श्लोक ढूँढ कर छात्रो को दें ।
- भगवत् गीता से छोटे - छोटे विषय देकर, प्रवचन, संवाद, इत्यादि प्रवृत्तियाँ करवाइये ।
- भगवद् गीता में वर्णित समर्पणभाव वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, अध्यय में किस प्रकार सहायक है, इसे उदाहरणों के माध्यम से समझाइये ।

●●●

2 देश भक्ति की संजीवनी

श्रीमद् भगवद् गीता मनुष्य को प्रबोधन करने वाला सार ग्रंथ हैं,जो मातृभूमि के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले शहीद वीरों को प्रेरित एवं प्रोत्साहित करता हैं । साहस, शौर्य, वीरता, धैर्य और बलिदान की भावना का आविर्भाव और सिंचन करने वाला ग्रंथ है । देशभक्त लाल, बाल, पाल, सुभाषचन्द्र बोस, गांधीजी स्वतंत्रता संग्राम सैनानियों को जीवन में गीता के माध्यम से किस प्रकार मनोबल बढ़ा उसका बहुत ही लाक्षणिक ढंग से इस निबंध में सादृष्टांत प्रस्तुत किया गया हैं ।

भारतीय संस्कृति की अनमोल धरोहर श्रीमद् भगवद गीता १८ अध्यायों और ७०० श्लोकों में सुग्रथित है । गीता का परम लक्ष्य मानव मात्र का कल्याण है । जो किसी विशेष धर्म, जाति, या व्यक्ति के लिए न होकर मानव मात्र के लिए उपकारी है । किसी भी देश, सम्प्रदाय, समुदाय, जाति या वर्ण का व्यक्ति क्यों न हो, यदि वह गीता का थोडा-बहुत भी अनुसरण करे) त उनका जीवन सार्थक हो जायेगा । इस बात की पुष्टि करते हुए शहीद वीरों की श्रृंखला भारत के भव्य इतिहास में स्वर्णक्षरों में अंकित है । सदियों से भारत भूमि की प्रजा गीता के ज्ञान से ओत-प्रोत होती रही है । भारतीय संस्कृति को गोद में खेलने वाले वीरों, वीरांगनाओं और महापुरुषोंने संस्कृति को सुरक्षित एवं संवर्धित करने के लिए अथाक प्रयत्न किये हैं ।

हम भारत के भव्य और गौरवशाली इतिहास के साक्षी हैं । कि समय - समय पर, भारत पर, अनेक विदेशी आक्रांताओं ने आक्रमण किये, फिर भी हम अपनी संस्कृति की सुरक्षा के लिए अडिग - अचल खड़े रहे कर । विश्व मंगल की भावना वाली भारतीय संस्कृति को जीवंत रखा है । इसका एक सबल कारण यह भी है कि भारत देश को सुरक्षित, अखंड और स्वतंत्र बनाये रखने में अनेक महापुरुषों ने विश्व - मंगल की भावना से ओतप्रोत होकर गीता के ज्ञान का अवलंबन लिया था । गीत के ज्ञान रुपी सागर में डुबकी लगाकर अपनी व्यक्तिगत भावना को गीता के रंग में रंगकर राष्ट्रभावना मे परिवर्तित कर दिया । जब स्वतंत्रता संग्राम के वीरों को फांसी की सजा दी गई, तब उन्होंने गीता ज्ञान की शक्ति से हँसते हुए शहादत का सामना किया । गीता का यह श्लोक आत्मबल प्रदान करता है ।

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते॥ (गीता 2.19)

(अर्थात् जो यह समझते हैं कि आत्मा को मारा जा सकता हैं या जो इसे मरा हुआ समझते हैं, वे दोनों ही अज्ञानी हैं । वास्तव में आत्मा न तो मरती है और न ही उसे मारा जा सकता हैं ।)

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥ (गीता 2.23)

(अर्थात् इस आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकता, अग्नि उसे जला नहीं सकती, जल इसे गला नहीं सकता और वायुं इसे सुखा नहीं सकता)

गीता ज्ञान को आत्मसात् करने वाले वीर भारत माता की जय के बुलन्द उद्घोष के साथ मातृभूमि के लिए वीरगति को प्राप्त हुए । यदि एक को फाँसी दी गई तो उसी बस्ती से कोई अन्य वीर पुरुष उठ खडा होता है । ऐसे ही एक वीर खुदीराम बोस का जन्म ३ दिसम्बर १८८९ को पश्चिम बंगाल के मीदनापुर जिले में हुआ था । उन्होंने गीता की शरण ली और देशभक्ति के गीत गाते गाते आजादी की लडाई में मात्र १९ वर्ष की आयु में अपने प्राणों की आहुति दे दी । बंग-भंग आंदोलन में अगुआ के रुप में भाग लेने वाले खुदीराम बोस को जब मुज्जफ्फरपुर

की जेल में सन् 1908 में फाँसी दी गई तब उस समय उनके हाथ में श्रीमद् भगवद् गीता थी । इस महान ग्रंथ में निरुपित आत्मा की अमरता को उन्होंने आत्मसात् किया था ।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥ (गीता 2.24)

(अर्थात् यह आत्मा अच्छेध (बिना काटा हुआ) है, अदाह्य (बिना जला हुआ) अफ्लेदय (जो जीला न कर सके) अशोष्य (अवशोषित होने वाला) और शाश्वत, सर्वव्यापी, अचल और स्थिर और सनातन शाश्वत है ।)

जब युवा हृदय सम्राट वीर भगतसिंह को अैपेल 1929 मे नेशनल असेंबली में बम फेकने के आरोप मे जेल में ड़ाल दिया गया, तो उन्होंने जेल प्रसाशन से श्रीमद् भगवद् गीता की माँग की । यह मामला तत्कालीन अंग्रेजी दैनिक द ट्रिब्युनल में छपा था । इसका शीर्षक था S. Bhagatsinh wants Geets(एस. भगतसिंह को गीता चाहिये) । जेल में भगतसिंह को दी गई गीता आज भी लाहौर के शहीद ए-आजम नामक संग्रहालय में रखी हुई है । इस पर वीर भगतसिंह के हस्ताक्षर भी अंकित हैं ।

बाँये हाथ से दाहिनी ओर की मूँछ (ताव) मरोडते हुए, छवि से सभी परिचित हैं । वे हैं महान देशभक्त क्रांतिकारी चन्द्रशेखर आजाद, जो सदैव अपने बाँये कंधे पर यज्ञोपवित, जेब में गीता और कमर में पिस्तौल रखते थे । यहाँ तक कि जब वे गुप्तरुप से निवास करते हुए ब्रिटिश क्रूरता के खिलाफ स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे, तब वे नियमित रुप से गीता का (स्तवन) जाप करते थे । वे द्रढनिश्ययी और प्रतिज्ञा पालक थे । उनकी सदाचारिता और उनको धमनियों में बहने वाली बहादुरी की अनेक गाथायें प्रचलित हैं । उनके इन सद्गुणों की प्रेरणा स्त्रोत गीता थी ।

गीता उस समय के क्रांतिकारीयों का मनोबल बढाने वाली और उनके स्वतंत्रता आन्दोलन का दार्शनिक आधार बन गयी ।

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।

धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते॥ (गीता 2.31)

(अर्थात् तुम्हे स्वधर्म को देखकर भी भयभीत नहीं होना चाहिये, क्योंकि क्षत्रिय के लिए धर्मयुक्त युद्ध से बढ़कर कोई दूसरा कल्याणकारी कर्तव्य नहीं है ।)

एक महान वीर योद्धा सुभाषचन्द्र बोस जिसे हम नेताजी उपनाम से पहचानते हैं । वे सदैव गीता अपने पास रखते थे । वह प्रतिदिन दैनिक कार्य के बाद गीता का अध्ययन करते थे । गीता के अध्ययन से उनमें द्रढ़ता, उद्यम और निर्भयता जैसे गुणों का विकास हुआ । नेताजी ने 'आजाद हिन्द फौज' तैयार की और ब्रिटिश सेना को थका दिया । इस सेना के कैप्टन एस. एस. यादव कहते हैं कि एकबार भीषण गोलीबारी की स्थिति में विचलित हुए बिना नेताजी निड़र होकर लड़े । नेताजी की इस धैर्य, वीरता और साहस को देखकर अन्य साथी भी उत्साहित हो गये और अंत तक लड़ते रहे । क्योंकि उन्होंने गीता के इस सार को आत्मसात् कर लिया था ।

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।

ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥ (गीता 2.38)

(अर्थात् सुख - दुःख, लाभ - हानि और जय - पराजय को समान समझने के बाद युद्ध के लिए कटिबद्ध हो जाओं, इस प्रकार युद्ध करने से तुम पाप के भागीदार नहीं बनोगे ।)

अपनी राष्ट्रवादी विचारधारा से एकजुट होकर लाल, बाल और पाल की तिकड़ी ने भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन की मजबूत नींव रखने में चिरस्मरणीय योग दान दिया है ।

'लाल' अर्थात् 'पंजाब केसरी' के नाम से विख्यात, साइमन कमीशन के विरुद्ध विद्रोह के महान सूत्रधार अर्थात् लाला लजपतराय । उन्होंने गीता का सेवन (अभ्यास) करकें उसके मर्म तक पहुँचे थे । इसकी पुष्टी स्वयं उनके शब्दों द्वारा होती है ।

''गीता का मुख्य मार्मिक तत्त्व यह है कि संसार में बाह्य विरोध, विषमता, असंगति क्यों न हो, परन्तु इन सभी विषमताओं के मध्य एक अखंड एकता और एक शाश्वत पूर्णता है । कर्तव्य और भाव में यदि विरोध दिखाई दे तो यह विरोध मात्र दिखावा ही है । मूलत: दोनों एक ही है । गीता इस महान सार को बहुत ही सुन्दर और प्रभावशाली तरीके से प्रतिपादित करती है ।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

कर्मफलहेतुभूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥ (गीता 2.47)

(अर्थात् तुम्हें कर्म करने का अधिकार है, उसके फल की इच्छा मत कर, अर्थात् कर्म की बिना किसी आशा या अपेक्षा के कर्तव्य की भावना से करे, कर्म न करने के प्रति आसक्त न हों ।)

इस त्रिपुटी में दूसरे बाल थे । वे लोकप्रिय स्वतंत्रता सेनानी थे अत: उन्हें ''लोकमान्य'' उपनाम दिया गया था ।

''स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है । मैं इसे प्राप्त करके रहूँगा'' यह नारा देने वाले लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक पर जब ब्रिटिश सरकारने राजद्रोह का आरोप लगाकर उन्हें बर्मा की मांडले जेल में कैद कर दिया था । उसी समय उन्होंने गीता रहस्य नामक पुस्तक की रचना की थी । इसमें उन्होंने श्रीमद भगवत् गीता के कर्मयोग की बृहद व्याख्या की है । इस पुस्तक में यह दार्शनिक विचार निहित है कि हमें मुक्ति को ओर द्रष्टि रखते हुए सांसारिक कर्तव्यों का पालन करना चाहिए । इस पुस्तक में उन्होंने मनुष्य को उनके सांसारिक जीवन में वास्तविक कर्तव्य की शिक्षा दी है । श्री कृष्ण ने अर्जुन से ऐसा कहा –

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मण:।

शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मण॥ (गीता 3.8)

(अर्थात् तुम्हें शास्त्र विदित स्वधर्म रुपी कर्तव्य कर्म करना चाहिए, कर्म न करने से कर्म करना श्रेष्ठ है, अर्थात् कर्तव्य कर्म निष्क्रियता से बेहतर है, और कर्म न करने से तुम्हारा शरीर निर्वाह भी सिद्ध नहीं होगा ।)

त्रिपुटी के तीसरे स्वतंत्रता संग्राम सेनानी अर्थात् 'पाल' । बिपिनचन्द्र पाल उन्हें 'बंगाल का शेर' के रुप में जाना जाता है । उन्होंने उपनिषद गीता जैसे ग्रंथों का गहन अध्ययन किया था । इसी लिए उन्होंने जातिवाद और अन्य सामाजिक कुरीतियों का खुलेआम विरोध किया था । गीत ज्ञान के प्रभाव से वे एक उत्कृष्ट वक्ता, शिक्षाविद और स्वतंत्रता के प्रबल समर्थकों में गिने जाते हैं।

इस प्रकार 'लाल' – 'बाल' और 'पाल' की तिकड़ी का स्वतंत्रता संग्राम रुपी महायज्ञ के मूल मे गीता के निष्काम कर्म का बोध निहित हैं ।

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह य:।

आधायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति॥ (गीता 3.16)

(अर्थात् हे पार्थ ! जो मनुष्य इस संसार मे परंपरा से प्रचलित सृष्टि चक्र का पालन नहीं करता अर्थात् अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता, वह अपनी इन्द्रियों के माध्यम से सुखों में क्रीड़ा करने वाले पापी मनुष्य का जीवन व्यर्थ है ।

यह बात सशस्त्र स्वतंत्रता सेनानीयों के आत्मबल, निड़रता और गीता ज्ञान के संवंध में थी । परतुं अहिंसा के मार्ग पर चलकर भारत को आजादी दिलवाने का श्रेय जिसके सिर है, वे भारत के राष्ट्रपिता गांधीजी हैं''। वे गीता के परम उपासक थे । महात्मा गांधी कहते है, जब में हताश, निराश, उदास और चिंतित होता हूँ तब मैं गीता माता की शरण लेता हूँ । श्रीमद भगवद् गीत के गहन ज्ञानने गांधीजी के जीवन पर अमिट छाप छोड़ी गाँधीजी ने गीता के अनासक्ति योग का गुजराती भाषा में अनुवाद किया हैं ।)

महात्मा गांधीजी 'श्रीमद् भगवद् गीता' को विश्व धर्म की पुस्तक (के रुप में गिनवाते है) मानते हैं । गीता सरल और सहज रुप से गहन मूल्यों को व्यक्त करती है । इन मूल्यों का गांधीजी के जीवन और व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पड़ा । गांधीजी स्वयं कहते है, मेरे मतानुसार, गीता समझने में बहुत सरल पुस्तक है । वह कुछ बुनियादी पहेलियाँ प्रस्तुत करतां है, जिसका समाधान निस्संदेह रुप से कठिन हैं । परंतु मेरे मतानुसार गीता का सामान्य द्रष्टिकोण दीपक की भाँति स्पष्ट है । वह किसी भी प्रकार के स्थापित विवाद से मुक्त है । यह मन और हृदय दोनों को संतुष्ट करता है । यह दर्शन और भक्ति दोनों से परिपूर्ण है । इसका प्रभाव सार्वभौमिक है, और भाषा अविश्वसनीय रुप से सरल है ।''

गांधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी माने जाने वाले भूदान आन्दोलन के स्थापक आचार्य विनोबा भावेने गीत पर कई व्याख्यान दिये और उनकी पुस्तके गीता - प्रवचन और 'गीता चिंतनिका' आज भी लोकप्रिय और माननीय है । विनोबा भावे जी गीता - महिमा का स्पष्ट शब्दों मे वर्णन करते हुए कहते हैं, ''जितना अधिक मेरा शरीर माँ के दूध पर निर्भर रहा है, उससे कहीं अधिक मेरे हृदय और बुद्धि का पोषण गीता रुपी दूध के माध्यम से हुआ है । श्रद्धा और प्रयोग इन दो पंखों के माध्यम से ही मैं गीता गगन में यथाशक्ति उड़ान भरता रहता हूँ । गीता मेरी आत्मा है । जब मैं किसी से गीता के विषय में बात करता हूँ तो मैं गीता सागर पार करता हूँ और जब मैं एकांत में रहता हूँ, तब इसके अमृतरुपी सागर में गहरी डूबकी लगाने बैठ जाता हूँ ।''

इस प्रकार भारत को स्वतंत्र कराने के लिए अनेक महापुरुषों ने अपना जीवन जनहित के लिए समर्पित कर दिया । इसके मूल में गीता के इस श्लोक की प्रेरणा निहित होगी ।

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय:।

लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि॥ (गीता 3.20)

(अर्थात् जनक आदि ऋृषियों ने भी अनासक्ति कर्माचरण द्वारा परम सिद्धिको प्राप्त किया था । अत: लोकसंग्रह को देखते हुए तुम मात्र कर्म करने योग्य हो, अर्थात् तुम्हारे लिए कर्म करना ही उचित हैं ।)

भारतीय संस्कृति के रक्षक और पोषक, प्रत्यक्ष - परोक्ष स्वतंत्रता के वीरों और इन सभी महापुरुषों ने गीता का अध्ययन और अनुसरण करके समाज के समक्ष श्रेष्ठ उदाहरण स्थापित किये हैं । हमारे लिए इन महापुरुषों का जीवन और गीताज्ञान अनुकरणीय हैं ।

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जन:।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥ (गीता 3.21)

(अर्थात् श्रेष्ठ मनुष्य जो आचरण करता है, उसी आचरण का अनुसरण अन्य लोग भी करते हैं। वे जो कुछ सिद्ध कर देते हैं, पूरा मानव समूह उसी के अनुरुप आचरण करने लगता है ।)

स्वाध्याय

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :

1. अंग्रेजोने भारता वासियों के लिए कौन सा आदेश दिया था ?
2. नेता सुभाषचन्द्र बोस का दैनिक नियम क्या था ?
3. 'लाल', बाल और 'पाल' इस तिकड़ी का पूरा नाम बताइये ?
4. लोकमान्य तिलकने जनता को कौन सा नारा दिया था ?
5. 'भगवद् गीता' के प्रति गांधीजी का क्या अभिप्राय है ?

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दो - तीन वाक्यों में दीजिए :

1. ब्रिटिश आदेश का भारतीयों पर क्या प्रभाव पड़ा ?
2. लोकमान्य तिलक के अनुसार गीता का तात्पर्य क्या अर्थ हैं ?

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर विस्तार से दीजिए :

1. अपने शब्दों में लिखिए - 'भगवत् गीता' स्वतंत्रता सेनानियों के आंदोलन में एक प्रेरक शक्ति बन गई ।
2. गीत के प्रति बिनोबा भावे के द्रष्टिकोण को स्पष्ट कीजए ।

4. निम्नलिखित अनुभाग अ, अनुभाग ब के साथ उचित जोड़ मिलायें ।

	अ	**ब**
1.	खुदीराम बोस	1. बंगाल टाइगर (शेर)
2.	सुभाषचन्द्र बोस	2. सत्य के प्रयोग
3.	गांधीजी	3. पंजाब केसरी
4.	बालगंगाधर तिलक	4. बंग भंग आन्दोलन
5.	लालालजपतराय	5. आजाद हिंद फौज
6.	बिपिनचन्द्र पाल	6. गीता - रहस्य

छात्र - प्रवृत्ति

- 1857 का महासंग्राम 'लेखक: पंडित सत्यनारायण शर्मा अनुवाद : रेखाबेन दवे - पुस्तक खोजकर पढ़ियें ।
- उमाशंकर जोशी की कर्ण-कृष्ण, 'युधिष्ठिर युद्ध विषाद', कवि न्हानालाल की 'भरत गोत्र का चीर हरण' इत्यादि पुस्तकों को ढूँढकर, प्राप्त करके पढ़े ।

- You Tube और google 'श्रीमद् भगवद् गीता', क्रांतिकारियों, आन्दोलनों, स्वतंत्रता सेनानीयों आदि के बारे में जानकारी ढूँढियें और पढ़िये ।
- गीता पर आधारित चिंतन सूत्रमाला तैयार कीजिए, जिसका सोशियल मीडिया के माध्यम से प्रचार - प्रसार करिये ।

शिक्षक की प्रवृत्ति

- क्रांति तीर्थ श्यामजी, कृष्ण वर्मा - मांडवी (कच्छ) की मुलाकात, प्रवास का आयोजन करिये और जानकारी प्रदान कीजिए ।
- स्कूल में गीता पाठ, व्याख्यान और गीता और स्वतंत्रता सेनानियों से संबंधित विभिन्नि प्रवृत्तियों का आयोजन करिये ।
- ज्ञान, भक्ति, कर्म जैसे सेवाकीय प्रकल्पों की मुलाकात लेकर उसमें प्रत्यक्ष रुप से सहभागी बने और छात्रों को भी शामिल करें ।
- गीता जयन्ति मनायें, प्रश्नमंच जैसी प्रतियोगिताओं का तथा पुस्तक समीक्षा - जैसे कार्यक्रमों का आयोजन करियें ।

●●●

नोंध

नोंध

नोंध

नोंध

नोंध